SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में वृद्ध–विमर्श

प्रतीक्षा, शोधार्थी, हिंदी विभाग
दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
प्रतीक्षा, शोधार्थी
E-mail : Pratikshachauhan.105@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 11/07/2024
Revised on : 04/09/2024
Accepted on : 13/09/2024
Overall Similarity : 00% on 05/09/2024

शोध सार

साहित्य मनुष्य के जीवन में एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक साहित्य मानव जीवन का एक अभिन्न अंग बना हुआ है क्योंकि साहित्य समाज का वास्तविक चित्र दिखाता है। साहित्य समाज में व्याप्त कुरीतियों, प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों का चित्रण करता है। समाज में साहित्य एक आधार– स्तम्भ की तरह कार्य करता है। साहित्य ही समाज में व्याप्त परम्पराओं और समस्याओं पर विचार विमर्श करने के लिए प्रेरित करता है। साहित्य के द्वारा ही हम आदिवासी–विमर्श, दलित–विमर्श, स्त्री–विमर्श, बाल–विमर्श, दिव्यांग–विमर्श और वृद्ध विमर्श आदि के लिए आवाज उठा सकते हैं। आजकल के युवा–वर्ग के व्यवहार को देखते हुए वृद्ध–विमर्श करना आवश्यक हो गया है।

मुख्य शब्द

वृद्ध जीवन, विमर्श, सभ्यता और संस्कृति, एकल परिवार,सोशल मीडिया, उत्तर आधुनिकतावाद.

मनीषा कुलश्रेष्ठ हिंदी साहित्य की एक प्रख्यात लेखिका है। आपकी लेखनी जब किसी विषय पर कलम चलाती है तो सशक्तता से परिपूर्ण होती है। आपने अपने साहित्य में वृद्ध जीवन में आने वाली चुनौतियों एवं उनसे बुजुर्गों के लड़ने के अदम्य साहस को भी दिखाया है तो एक ओर समाज बुजुर्गों को नकारता हुआ भी चित्रित किया है। वृद्धावस्था तक पहुंचते–पहुंचते मनुष्य का शरीर शिथिल हो जाता है एवं उसकी ऊर्जा–शक्ति कम हो जाती है। इस समय में वृद्ध व्यक्ति को अपनों का सहारा एवं प्रेम–स्नेह की आवश्यकता होती है, परन्तु अधिकतर युवा–वर्ग इन सबको नकारता हुआ ही प्रतीत होता है। बुजुर्ग व्यक्तियों के पास अथाह ज्ञान का भण्डार होता है जिसे वे पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित करने की

कोशिश करते हैं। लेखिका ने अपनी कई कहानियों का विषय वृद्ध जीवन की समस्याओं को बनाया गया है। उम्र के इस आखिरी पड़ाव पर पहुंचते–पहुंचते मनुष्य अत्यधिक आशावादी हो जाता है। मनुष्य अपने जीवन की सारी जमा पूंजी अपनी संतानों की परवरिश में लगा देता है और वृद्धावस्था में अपने लिए प्रेम एवं स्नेह की आशा रखता है।

वृद्धावस्था का अर्थ

'वृद्धावस्था' 60 या 65 वर्ष से प्रारंभ होने वाली अवस्था है। इस उम्र में मनुष्य की मांसपेशियों में जकड़न सी होने लगती है एवं उन्हें अपने लिए सहारे की आवश्यकता प्रतीत होती है।

लोक भारती राजभाषा शब्द कोश (हिन्दी–अंग्रेजी) के अनुसार– ''वृद्ध शब्द से अभिप्राय Old Person से होता है।''[1]

वृद्धावस्था स्वतः समय के साथ चली आने वाली अवस्था है इस अवस्था में उनके विचारों में स्वाभाविक ही युवा वर्ग के साथ अंतर आने लगता है। आपस में विचारों में जब अंतर आने लगता है तो यही अंतर अंतराल का रूप धारण कर लेता है और धीरे–धीरे आपसी मनमुटाव का यह रूप बढ़ता ही चला जाता है।

विमर्श का अर्थ

'विमर्श' शब्द का साधारणतया अर्थ विवेचन एवं परीक्षण तथा विचार के रूप में प्रयुक्त होता है। हमारे समाज में जब भी किसी समस्या का जन्म होता है, तब उस समस्या परिस्थिति को देखते हुए उसके प्रति सांस्कृतिक, मानसिक, और वैचारिक धारणाओं को आत्मसात करते हुए उसे समझने का प्रयास करना ही विमर्श कहलाता है।

लोक भारती राजभाषा शब्द कोष के अनुसार– ''विमर्श से तात्पर्य पूर्ण चिन्तन से है।''[2]

वृद्ध विमर्श

वर्तमान समय में वृद्ध विमर्श अत्यंत आवश्यक है। वृद्धावस्था में बुजुर्गो की समस्या और उसका निवारण करना वृद्ध विमर्श ही है। आज समाज में स्वार्थता, धन लोलुपता इतनी बढ़ चुकी है कि लोग बुजुर्गों को घर में रखी हुई बेकार वस्तु समझने लगते हैं। परिवार के लोगों का दुर्व्यवहार ही उनके नैतिक मूल्यों को ह्रास करता जाता है। इन्हीं सब को देखते हुए आज वृद्ध विमर्श जैसे शब्द को भी शब्दकोश में जगह मिली। बुजुर्गों की दयनीय स्थिति के बारे में विचार करने वाला कोई नहीं था। वृद्धों की पीड़ा की गूंज से ही विमर्श बना। आज के युग में मनुष्यों की व्यस्तता इतनी बढ़ गयी है कि हमारे पास उनके लिए दो पल का भी समय नहीं शेष होता है। वृद्ध विमर्श समकालीन समय का महत्वपूर्ण विमर्श बन चुका है। आज केवल हमारे देश में ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर पर भी बुजुर्गो की स्थिति चिंतनीय हो रही है। हम अपनी स्वार्थता के कारण ही न तो बुजुर्गों पर ध्यान दे पा रहे हैं और न ही उनके अनुभव से ज्ञान अर्जित कर पा रहे हैं। हम स्वयं ही अपने पारिवारिक विघटन के जिम्मेदार बनते जा रहे हैं। आज का समाज अपने व्यावसायिक जीवन में इतना व्यस्त हो जाता कि उसके पास पुरानी पीढ़ी के लिए समय ही नहीं बचता। इसका परिणाम यह है कि नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच दूरी बढ़ती ही जा रही है। हमें अपनी सभ्यता और संस्कृति से इस दरार को भरना होगा। आज समाज में संयुक्त परिवारों का प्रतिशत कम एवं एकल परिवारों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है। आज दोनों पीढ़ियों के एक साथ विचार साझा न हो पाने के कारण ही मूल्यों का विघटन हो रहा है। आज के समय में नौकरी के लिए अपनी जन्मभूमि से पलायन करते समय कुछ लोग वापस अपने माता–पिता के पास भी नहीं आना चाहते इसकी वजह से वृद्धों का जीवन अकेलेपन और समस्याओं में ही व्यतीत हो जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा 14 दिसंबर 1990 को यह निर्णय लिया गया कि 1 अक्तूबर को प्रतिवर्ष अंतरराष्ट्रीय 'वृद्ध दिवस' मनाया जाएगा। आज के समय में मनुष्य 'अपनों के समय' को टेलीविजन, मोबाइल फोन और इंटरनेट को देता है। इस चपेट में मात्र युवा पीढ़ी ही नहीं बल्कि बच्चे भी सम्मिलित हैं। प्राचीन समय में बच्चे अधिकतर अपना समय अपनी दादी–नानी, दादा–नाना के साथ व्यतीत करना पसंद करते थे। बच्चे अपनी दादी–नानी से

किस्से–कहानियाँ सुनना पसंद करते थे। वृद्धाश्रमों का बढ़ना (वर्तमान समय में) इस बात को सिद्ध करता है कि परिवार में वृद्धों की उपस्थिति को लोग अब व्यर्थ समझने लगे हैं। लोगों का प्रेम एवं स्नेह मात्र अब इंटरनेट की दुनिया तक ही सिमट कर रह गया है। आज की युवा पीढ़ी अपने बुजुर्गों को तीर्थ स्थल कराने के बहाने वृद्धाश्रम छोड़कर चले जाते हैं। बेचारे कुछ बुजुर्ग तो जीवन भर सिर्फ अपनों की प्रतीक्षा में ही व्यतीत कर देते हैं। सोशल मीडिया और टी.वी. का असर लोगों में कुछ इस तरह व्याप्त हो गया कि उन्हें इन्हीं में मनोरंजन मिलता है जिसका परिणाम यह है कि– ''अब टी.वी. की चकाचौंध में वृद्धों की बाते धुंधली सी पड़ गयी हैं।''[3]

वर्तमान काल में हिंदी कथा–साहित्य में बुजुर्गों को केंद्र में रखकर लेखन कार्य हो रहा है।

लेखिका ने अपनी अनेक कहानियों में वृद्ध जीवन को परिकल्पित किया है। मनीषा ने अपनी कहानियों में वृद्धों का अकेलापन, पीढ़ीगत अंतराल, स्वजनों का अत्याचार, उपेक्षा पूर्ण व्यवहार और मानसिक–शारीरिक दुर्बलताओं से उत्पन्न हुयी समस्याओं को चित्रित किया है।

मनीषा कुलश्रेष्ठ की 'शाश्वती' कहानी एक प्रोफेसर के आत्मीय भाव और उसकी शोध छात्रा के मन में पनपते प्रेम की कहानी है। एक प्रोफेसर जब उम्र के तीसरे पड़ाव पर अपनी ही शिष्या से आत्मीयता का भाव रखता है तो वही आत्मीयता उसके लिए अभिशाप बन जाती है। शाश्वती की मां न होने कारण प्रोफेसर का उसके प्रति अधिक जुड़ाव था परन्तु शाश्वती की अतिरिक्त श्रद्धा उसके मन में पल रहे प्रेम को स्पष्ट दर्शाती थी। शाश्वती के प्रेम को उम्र का अंतर कम न कर सका बल्कि और बढ़ाता ही गया। शाश्वती अपने प्रेम को रुमानी कविताओं का रूप देने लगी। वह अपनी थीसिस के प्रत्येक चैप्टर के साथ अपनी रुमानी कविताएँ लगा देती। प्रोफेसर उसकी कविताओं का उत्तर देने की बजाए उन्हें सहेजकर रख लेते। प्रोफेसर को शाश्वती की यह आत्मीयता अब भली लगने लगी थी। शाश्वती की सगाई जब एक अप्रवासी भारतीय से हो जाती है तो वह प्रोफेसर से अपने विवाह की दिनांक और आगे बढ़वाने की बात करती है। शाश्वती तब अपनी कविताओं के प्रोफेसर से उत्तर माँगती है। प्रोफेसर को भी उसकी कविताएँ पढ़कर आनन्द प्राप्त होता था परन्तु उम्र के दायरे ने उन्हें कहने से रोक दिया था। इसी विषय पर शास्वती और प्रोफेसर का एक संवाद प्रस्तुत है– ''स्वार्थ है यह तो... मुझे वंचित रखा आपने उस आनंद से। मुझे लगा था कि मैं रिजेक्ट कर दी गई।'' ''ये सब प्रश्न व्यर्थ हैं शाश्वती, हम बहुत आत्मीय रहे हैं।'' ''सर.. आपकी आत्मीयता और मेरा प्रेम..'' तुम्हारे प्रेम के लिए, शाश्वती, मैं सही पात्र नहीं था..''

यह आपको नहीं निश्चित करना था सर।

चलो अब नई शुरुआत करो। भाग्य अगर चाहता तो हमें सही समय पर पैदा करता– ''तुम्हें पहले या मुझे बाद में।''[4]

शाश्वती यह बात जानकर मन ही मन बहुत दुखी हो जाती है कि सर मेरी रूमानी कविताओं के वारे में जानते थे। शाश्वती विवाहोपरांत लंदन चली गयी परन्तु प्रोफेसर के साथ उसका पत्राचार चलता रहा। इसके बाद ईमेल के माध्यम से दोनो की बातचीत होती थी। वार्तालाप का विषय अक्सर साहित्य से ही जुड़ा होता था। लगभग दस वर्ष बाद शाश्वती की एक रुमानी कविता प्रोफेसर की पत्नी के हाथ में पड़ जाती है। इस विषय पर निर्णय लेने के लिए प्रोफेसर की पत्नी अपने बेटे–बहू, बेटी–दामाद को घर बुलाने को कहती हैं। प्रोफेसर को यह सब अच्छा नहीं लगता है और वह पत्नी को समझाने की पूरी कोशिश करते हैं– ''बच्चों के बीच अदालत लगना और इस निजी प्रसंग का उठाना, मुझे तोड़ रहा है और यह समय मैं एक अंदर तक कचोटती बेचैनी के साथ बिता रहा हूँ। उनकी आँखो के वे आशंकाओं से उपजे प्रश्न.. वह भी उम्र के इस तीसरे पड़ाव पर।''[5] प्रोफेसर अपने परिवार से बहुत प्रेम करते थे परन्तु शाश्वती के साथ उनकी आत्मीयता को भी झुठलाया नहीं जा सकता। वह आगे भी इंटरनेट के माध्यम द्वारा शाश्वती से साहित्यिक गतिविधियों के कारण जुड़े रहे। उम्र के जिस दौर पर उनकी पत्नी को उनका साथ देना चाहिए था वह पत्नी ही उन्हें संदिग्ध भाव से देखने लगी थी। प्रोफेसर ने अपनी आत्मीयता की भी एक मर्यादा बना रखी थी जिसे उन्होंने कभी नहीं लाँघा।

मनीषा कुलश्रेष्ठ की 'एक मुट्ठी छांव' कहानी एक छोटी कहानी है। कहानी में दिहाड़ी मजदूरी करने वाला पिता अपने परिवार को बहुत मुश्किल हालातों में पालता है। दूसरी ओर एक मध्यम वर्गीय ईमानदार सरकारी कर्मचारी अपनी बुजुर्ग पत्नी के साथ अकेले जीवन यापन करने को मजबूर है। जब एक पिता सेवानिवृत्ति होकर अपने परिवार के साथ रहना चाहता है तब तक उसके बच्चे अपना परिवार अलग बसा चुके होते हैं। आज के युवा अपने से बड़ों की बात तक सुनना नहीं चाहते हैं। वर्तमान समय में एकल परिवार का प्रचलन अधिक बढ़ गया है। लोग अपने बुजुर्गों को बोझ समझने लगे हैं। इसी कारण लोग अपने माता–पिता को वृद्धाश्रम पहुंचाने में थोड़ी सी भी शर्म महसूस नहीं करते। कुछ बच्चे तो अपने बुजुर्गों को अकेला छोड़कर सदैव के लिए परदेश में वस जाते हैं। इस कहानी का यह संवाद इस बात को सिद्ध करता है कि बच्चों के बिना माता–पिता कितने अकेले हो जाते हैं– ''बाहर आए तो देखा, पत्नी बच्चों से बतिया रही थीं। अपने मन की गाँठो में बंधे बच्चे भी खुलने लगे थे ममता के कोमल हाथों से। अपने लाड़ले जब घोसला छोड़ उड़ जाते हैं तो अधेड़ माँओ की ममता यूँ ही तृप्त हुआ करती है अन्य बच्चों के माध्यम से। एक औरत के भीतर की माँ कभी बूढ़ी नहीं होती।''[6]

लेखिका की कहानी 'प्रेत कामना' देह सुख की लालसा रखने वाले एक अधेड़ उम्र प्रोफेसर और उसकी रिसर्च स्कॉलर की कहानी है। कहानी में दोनो एक दूसरे से शारीरिक और मानसिक प्रेम की चाह रखते हैं। प्रोफेसर अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद अकेलेपन से ग्रसित हैं। इसी अकेलेपन को स्कॉलर अणिमा अपनेपन में परिवर्तित करने का प्रयास करती है। अणिमा की अन्धी श्रद्धा प्रोफेसर को भयभीत करने लगी थी। वह नहीं चाहते थे कि समाज अणिमा पर लांछन लगाए और वह अपना भविष्य यहाँ रहकर खराब करे। प्रोफेसर पन्त को अणिमा का जब विवाह न करने का निर्णय पता चलता है तो वह उस पर बहुत क्रोधित होते हैं। प्रो. पन्त का एक संवाद देखिए– ''यह सम्भव नहीं अणिमा, हर इन्सान को जीवन में एक सोलमेट की जरुरत होती है। नारीवादी होने का अर्थ यह नहीं कि पुरुष की आवश्यकता को नकार दिया जाए जीवन से ही। नारीवादिता का अर्थ यह है, औरत की अपने स्वतन्त्र अस्तित्व के प्रति सजगता। विवाह अवश्य करना और उस दाम्पत्य की नींव में एक मजबूत कन्धा लगाना और दूसरा बचा कर रखना। उस पर रखना नींव अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की और सन्तुलन को साधे जीवन चलाना। शुरुआत के सालों में दिक्कत होगी फिर सीख जाओगी विवाह और कैरियर का सन्तुलन साधना।''[7] अणिमा अपनी पीएचडी समाप्त कर उसी विश्वविद्यालय में एडहॉक लेक्चरर के पद पर कार्यरत हो गयी। अणिमा का सहपाठी और सहयोगी मिलिंद अणिमा की तरफ आकर्षित था। मिलिंद ने अणिमा को अपनी जीवन–संगिनी बनाने का प्रस्ताव भी रखा परंतु अणिमा ने उस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इस बात पर मिलिंद उससे खीझ गया। वह गुस्से में अणिमा से कहता है कि– ''अणिमा, तुझ पर सर की विशाल, भव्य बुद्धिमत्ता, उनके यश और व्यक्तित्व की छाया पड़ गयी है और तू उससे मुक्त होकर ही किसी अन्य के बारे में सोच सकती है और नहीं मुक्त हुई तो टंगी रहना त्रिशंकु–सी। उस खड़ूस बुड्ढे ने ही समझाया होगा कि अणिमा तुम विवाह के लिए नहीं बनी हो।''[8]

प्रोफेसर पन्त को विश्वविद्यालय की ओर से एक प्रोजेक्ट के तहत जर्मनी जाना पड़ा। प्रोफेसर के वापस आने से पहले अणिमा भी एक प्रोजेक्ट के कारण अमेरिका चली गयी। कुछ वर्षों के उपरांत प्रोफेसर के कॉल करने पर अणिमा वापस भारत लौटती है। अणिमा और प्रोफेसर जब दोबारा एक दूसरे से मिलते हैं तो दोनो एक दूसरे को पास आने से रोक नहीं पाते हैं। इसी दौरान प्रोफेसर का पुत्र सलिल वर्षों बाद अपने पिता का हाल जानने के लिए घर आता है। अपने पिता और अणिमा को अंतरंग हालातों में देखकर हक्का बक्का रह जाता है। सलिल साथ में खाने का पैकेट भी लाया था जो उससे हड़बड़ी में सीढ़ियों पर ही छूट गया था और वह दबे पाँव वहाँ से निकल गया था। प्रोफेसर को सलिल के घर आने का पता चल गया था। वह बहुत ही असमंजस की स्थिति में अपने आप को देखते हैं। वह कभी तो समाज, कुल–मर्यादा, प्रतिष्ठा और अपने बच्चों के बारे में सोचते हैं और कभी इसके विपरीत उनका विद्रोही व्यक्तित्व जाग पड़ता है। वे मन ही मन सोचते हैंः ''क्या कर लेंगे साले। कभी आये पूछने कि, पापा कैसे हो? कभी आया भी तो अकेला, न पोते न बहू। एक कर्तव्यपूर्ति कर चलता बना। कितने कठिन पल अकेले पन में बिता डाले, कोई नहीं आया। एक सुख अणिमा के साथ लौटा तो, चले आये उस पर अधिकार जताने। अरे बस कर्तव्य निभाकर चुक गया, एक पिता भर हूँ मैं? पिता! जिसे अब एक प्रेत की तरह आदर्श पिता के फ्रेम

में बन्द रहना लाजमी है? अब वह एक आदमी एक व्यक्ति नहीं? मेरे अकेलेपन को किसी की जरूरत नहीं क्या ? इस बार अणिमा को रोक लूंगा।''[9] प्रो. पन्त ने रिटायर होने के बाद अपने परिवार के साथ समय बिताने के सपने संजोए थे परन्तु उनके बेटे ने अपना नीड़ अलग बना लिया था और बेटी भी विदेश में रहती थी। प्रो. अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद सालों एकाकीपन से जूझते रहे परन्तु किसी भी बच्चे ने आकर उनका हाल पूछना जरूरी नहीं समझा। वर्षों बाद जब अणिमा के रूप में उनके जीवन में प्रसन्नता आयी तो चले आए उसे छीनने। आज का युवा स्वार्थ में इतना अन्धा हो गया है कि उसे अपने माता–पिता के अकेलेपन की कोई फिक्र नहीं है। एक ही शहर में रहते हुए भी दो घरों का चलन रुकने का नाम नहीं ले रहा है। सलिल भी उसी शहर में रहता है जिस शहर में उसके पिता रहते हैं। वह अपने परिवार और व्यवसाय में इतना रम गया कि उसे अपने पिता का अकेलापन भी नहीं दिखा। ऐसे बच्चों को फिर अपने माता–पिता की खुशियों को छीनने का कोई हक नहीं।

लेखिका की 'परिभ्रान्ति' कहानी एक विधुर व्यक्ति के एकाकीपन एवं मानसिक द्वन्द्व की कहानी है। कर्नल साहब का एकाकीपन उनकी पत्नी की मृत्यु के बाद बहुत बढ़ गया। यही एकाकीपन उन्हें ब्रेन ट्यूमर और पर्सनैलिटी डिसआर्डर जैसी भयावह बीमारियों की ओर खींच ले गया। वह युवावस्था में एक आदर्श वादी व्यक्ति रहे, परन्तु जीवन के इस आखिरी पड़ाव में अनेक कुंठाओ से ग्रसित हो चुके थे। उन्हें छोटी–छोटी बातों पर क्रोध आने लगता था। वह अपनी दोनो बहुओं से भद्दे मजाक और रसीली बातें करते जिससे दोनो बहुएं चिढ़ जाती। इसका एक उदाहरण देखिए– ''बहू! रात क्या पेट में तकलीफ थी। कराह क्यों रही थी? फिर दो बार फ्लश चला।'' छत्तीस साल की उनकी बहू मंजुला के गाल लाल हो जाते और चेहरा तमतमा जाता। अपने डॉक्टर पति से शिकायत करती, ''पता नहीं पिताजी को क्या होता जा रहा है? अजीब तरह से देखते हैं और उससे कहीं अजीब सवाल पूछते हैं।''[10] वह अपनी कामबाली बाई से भी ऐसी भद्दी बातें करने लगे थे। वे स्वंय ही अपने अन्दर आए इस भारी बदलाव को नहीं समझ पा रहे थे। उस व्यक्ति ने अपने यौवनकाल में भी कभी किसी सुंदर स्त्री की तरफ नहीं देखा था। वह न जाने क्यों इस उम्र में औरतों से भद्दी बातें करने को अकुलाते थे। एक साथी की कमी अब उन्हें रह रहकर सताती थी। वह चाहकर भी अपनी परेशानी अपने बेटे–बहुओं को नहीं बता पा रहे थे। उनके बेटे–बहू अपनी व्यस्तता में रहने के कारण उनके इस भारी व्यवहार–परिवर्तन को समझ ही नहीं पा रहे थे। एक दिन उनकी बहू की बहन अंजलि अपनी दीदी से मिलने घर आयी परन्तु उस समय घर पर कोई नहीं था। वह घर पर अंजलि को अकेला देखकर उससे बेतुकी बातें करने लगे और उसे गलत तरीके से छूने का प्रयास करने लगे। अंजलि गुस्से में आकर वहाँ से चली जाती है।`शाम को विकास जब ऑफिस से वापस आया तो उसकी पत्नी ने गुस्से में सारा किस्सा अपने पति को बताया। मंजुला और विकास एक दूसरे से इस बात पर बहस करने लगे। मंजुला विकास से गुस्से में आकर कहती है कि– ''बस–बस! अब तो पानी सिर से गुजर गया विकास। आप बात करते हैं या मैं ही कह दूं? मैं तंग आ गयी हूँ, इस सठियाये बूढ़े से... रात–रात भर हमारे बेडरूम से कान सटाये चहलकदमी करते रहते हैं, सुबह उठकर पूछते हैं... रात क्या...।''[11] कर्नल साहब का अकेलापन उन्हें धीरे–धीरे खाए जा रहा था। बहुयें तो पहले से ही नाराज थी अब दोनों पुत्रों के सिवाय उनके पास कोई सहारा न था। उनका पुत्र विकास इस परिस्थिति को अच्छे से भांप चुका था। उसने अपने डॉक्टर मित्र को अपने पिता की सभी रिपोर्ट्स दिखाईं। अपने मित्र की बातें सुनकर विकास भौचक्का रह गया। उसके पिता एक गम्भीर बीमारी के शिकार हो चुके थे। उन्हें फ्रटल लोब ट्यूमर था एवं वे पर्सनालिटी डिसऑर्डर के शिकार हो चुके थे। उनके मस्तिष्क के एक हिस्से ने काम करना बंद कर दिया था। यही हिस्सा व्यक्ति को सेक्सुअली चीजों के बारे में सही और गलत से अवगत है। वह सही और गलत के बारे में निर्णय लेने में अब असमर्थ हो चुके थे। उनके बेटे अब उनका ऑपरेशन कराना चाहते थे। जब उनके पुत्र कमरे में गए तो उन्हें उनकी डायरी के सिवा कुछ नहीं मिला। कर्नल साहब डायरी में अपनी स्वीकारोक्ति लिखकर सदैव के लिए घर छोड़कर जा चुके थे। उनके पुत्रों ने उनकी बीमारी समझने में बहुत देर कर दी थी। उनके पास अब उनके पिता की आत्म–स्वीकारोकितयों के अलावा कुछ शेष नहीं बचा था। कर्नल साहब को जरूरत थी तो अपनों के प्यार की, हिम्मत की है परन्तु अफसोस! जो उन्हें उनका परिवार समय पर नहीं समझ पाया।

स्वाँग कहानी एक वृद्ध मजबूर राष्ट्रपति सम्मान से पुरस्कृत व्यक्ति की कहानी हैं। गफ्फार खाँ एक बहुरुपिया

लोककलाकार हैं। वह कैंसर पीड़ित व्यक्ति हैं। वह अपने कैंसर के इलाज के लिए सरकार से पेंशन चाहते हैं। गफ्फार खाँ ने अपना पूरा जीवन बहुरुपिया कला को समर्पित कर दिया। इसी से वह अपना और अपनी पत्नी का गुजारा चलाते थे। उनके घर पर कमाने वाले वाले वही एक व्यक्ति थे। बीमारी के साथ उम्र के इस पड़ाव पर उन्हें अब आराम की आवश्यकता थी। वह पेंशन प्राप्त करने हेतु सरकारी दफ्तरों के प्रतिदिन चक्कर लगा रहे थे। वे सरकारी दफ्तर जाकर नए कलेक्टर साहब के पी.ए. से कहते हैं कि– ''हमारे सुनने में आया है कि बुजुर्ग, एवार्ड मिले कलाकारों की बीमारी–हारी में सरकारी सहायता मिलती है?''[12] एक घंटे तक वह पर्ची बनवाकर कतार में खड़े रहे। नए कलेक्टर साहब ने कम्प्यूटर पर देखकर कहा कि ऐसी कोई स्कीम नहीं है परन्तु आपकी तीन महीने की रुकी हुयी पेंशन तो मिल जाएगी। आगे उन्होंने बताया कि गफ्फार खाँ बीमारी के लिए सरकार कोई आर्थिक मदद नहीं देती है। आपकी लोककला को अब कोई नहीं पूछता है। ऐसे हजारों लोककलाकार इस जिले में है परन्तु अब यह बहुरूपिया कला बीमार पड़ चुकी है। अब तो शायद इसे आपके बच्चे भी नहीं पूछते होंगे। गफ्फार खाँ को पेंशन के नाम पर कुछ ही पैसे मिलते थे जिनसे घर गृहस्थी भी बहुत कठिनाई से चलती थी। गफ्फार खाँ ने बहुत उम्मीद लगाकर उस नए कलेक्टर साहब से दोबारा कहा– मुँह उतर गया था, गफ्फार खान का। थूक गले में गटकते हुए बोले, ''ठीक कहते हैं साहब, कोई नहीं है हमारी कला का नामलेवा, न कोई बच्चा,न चेला... वो जानते हैं, अहमक थे उनके बुजुर्ग– कला के लिए गलते रहे ताउम्र। उनकी नजर में हमारी ये कला गले पड़ी अधेड़ रखैल है।... फिर भी आप कुछ दिलवा सकें हमारे इलाज के लिए सरकार से तो... मेहरबानी''[13] कलेक्टर साहब जब चंदा करके पैसे एकत्रित कर देने की बात कहते है तब गफ्फार खाँ चंदा लेने से मना कर देते हैं। इस उम्र पर गफ्फार खाँ के लिए अब स्वांग करना आसान न था, परन्तु मजबूरी में व्यक्ति सब करता है। गफ्फार खाँ ने भी मेले में स्वांग भरा जिससे उन्हें कुछ पैसे प्राप्त हुए। वही पैसे ले जाकर उन्होंने अपनी पत्नी के हाथों में रख दिए और सरकारी दफ्तर से कोई मदद न मिलने की कहानी सुना दी।

'गोल्फ कोर्स' कहानी रिटायर्ड लेफ्टिनेन्ट कर्नल केशव शर्मा एवं उनके मित्र रिटायर्ड मि. कण्णन के गोल्फ के प्रति प्रगाढ़ प्रेम पर आधारित है। दोनो ही मित्र नौकरी से रिटायर्ड हैं और दोनों के मध्य गहरी मित्रता है। गोल्फ कोर्स में नियमित आने के दौरान ही दोनों के मध्य मित्रता हुयी। मि. शर्मा और मि. कण्णन दोनो की पत्नियों की मृत्यु हो चुकी थी। दोनो मित्रों के बच्चे अपनी–अपनी गृहस्थी बसा चुके थे। नियमित व्यायाम करते रहने की वजह से मि. शर्मा सत्तर वर्ष की उम्र में भी स्वस्थ्य थे। युवावस्था में मि. शर्मा गोल्फ के अच्छे खिलाडी थे, परन्तु अब वह अपने गोल्फ के अनुभव नए गोल्फरों में बाँटना अधिक पसन्द करते हैं। मि. शर्मा की बहू एक ऑर्थोडेन्टिस्ट है और बेटा एम.बी.ए. करके भी घर पर पड़ा रहता है। इसी कारण पति–पत्नी में आपसी कलह रहती है। इन सब से ही बचने के लिए मि. शर्मा प्रतिदिन सुबह–सुबह अपनी साइकिल से गोल्फ कोर्स पहुंच जाते हैं। मि. कण्णन दक्षिण भारतीय मूल के निवासी हैं और मि. शर्मा से उनकी मुलाकात दो महीने पहले ही हुयी थी। गोल्फ प्रेम के कारण ही दोनों के मध्य इतने कम समय में इतनी प्रगाढ़ मित्रता हो गयी थी। खेल के बहाने ही दोनों मित्र आपस में अपने दुख–सुख साझा कर लिया करते थे। मि. कण्णन हमेशा एक अपराध बोध से ग्रस्त रहते थे। एक दिन मि. कण्णन ने अपने मित्र के सम्मुख अपना अपराध बोध स्वीकार किया। मि. कण्णन ने अपने अत्यधिक गोल्फ प्रेम के कारण ही अपनी पत्नी सूमा को खो दिया था। मि. कण्णन आयु में मि. शर्मा से थोड़ा कम है इसीलिए उनकी सेहत मि. शर्मा से थोड़ी अच्छी दिखती है। एक दिन मि. शर्मा गोल्फ कोर्स जल्दी पहुंच गए और मि. कण्णन की प्रतीक्षा करने लगे। मि. कण्णन मन ही मन सोचते हैं कि: ''गोल्फ दीवाना अपना ये क्रेजी कण्णन अब तक नहीं पहुंचा आज, वरना दोपहर तीन बजे से यहाँ डटा मिलता है। अपना बाबा आदम के जमाने का किट लिए।''[14] बहुत समय तक प्रतीक्षा करने के बाद मि. शर्मा अपने घर चले गए। मि. शर्मा की बहू नमिता उनकी समस्या को समझ गयी थी। उनकी साइकिल टूट गयी थी इसलिए वह मि. कण्णन को ढूंढने भी नहीं जा सकते थे। वह मि०कण्णन का फोन कई बार लगा चुके थे परन्तु उन्हें कोई भी उत्तर नहीं मिला। लगभग एक सप्ताह तक मि. शर्मा अपने अन्तरंग मित्र की प्रतीक्षा करते रहे। मि. शर्मा की बेचैनी अब बढ़ती ही जा रही थी क्योंकि उनके पास मि. कष्णन के घर का पता भी नहीं था। एक दिन जब मि. शर्मा गोल्फ कोर्स पहुंचे तब उनकी मुलाकात मि. कण्णन के जूनियर से हुयी। उसने मि.

कण्णन के पहले हार्ट अटैक आने की बात मि. शर्मा को बताई। मि. शर्मा उसी दिन मि. कण्णन से अस्पताल जाकर मिले। मि. शर्मा से मिलकर मि. कण्णन बहुत प्रसन्न प्रतीत हो रहे थे। मि. कण्णन ने अपनी लापरवाही के कारण ही अपनी पत्नी को खो दिया था। मि. शर्मा इसी घाव को भरने का प्रयास करने लगे। इसी मित्रता की चाह ने उनके जीवन जीने की चाह को और बढ़ा दिया।

निष्कर्ष

लेखिका ने बहुत ही भावनात्मक तरीके से वृद्ध– समस्याओं को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया है। इन कहानियों के माध्यम से लेखिका ने यही बताया है कि अपनों को भरपूर, प्रेम और स्नेह दें। प्रत्येक माता–पिता जिस प्रकार बचपन में अपने बच्चों का ध्यान रखते हैं, उसी प्रकार बच्चों को भी बुजुर्गावस्था में अपने माता पिता का ध्यान रखना चाहिए। घर के छोटे बच्चों को भी बचपन से ही दादा–दादी, नाना–नानी का ध्यान रखना सिखाना चाहिए। घर पर दिए गए संस्कारों को ही बच्चे बाहर वितरित करते हैं। आजकल तो नए–नए तकनीकी माध्यमों द्वारा हम अपने बुजुर्गों का ध्यान दूर होकर भी रख सकते हैं। लेखिका ने इन कहानियों में बुजुर्गों की जिस व्यथा पर जोर दिया है वह है अकेलापन। एकाकी जीवन जीते–जीते व्यक्ति कभी–कभी भयानक मानसिक बीमारी का भी शिकार हो जाता है। बुजुर्गावस्था में व्यक्ति सिर्फ अपने बच्चों का साथ और समय चाहता है। आजकल सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म हमें प्रतिदिन नए–नए वृद्धाश्रमों से अवगत कराता है। वृद्धाश्रमों में रह रहे मायूस चेहरे हमें धिक्कारते हैं ऐसी शान शौकत भरी जिंदगी जीने पर। यदि आज हमारा समाज जाग्रत नहीं हुआ तो एक दिन ऐसे युवाओं का पतन तय है। यदि आज हम अपने माता–पिता का ध्यान नहीं रखेंगे तो कल हमारा भविष्य अंधकारमय होकर रहेगा।

सन्दर्भ सूची

1. बाहरी, हरदेव (2016) *लोक भारती राजभाषा शब्दकोश,* लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, उत्तरप्रदेश, पृ. 466।
2. बाहरी, हरदेव (2016) *लोक भारती राजभाषा शब्दकोश,* लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, उत्तरप्रदेश, पृ. 455।
3. मेकवेल, मार्टिन (2008) *मेरी कथाः दलितयात्रा,* संघर्ष और भविष्य वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 100।
4. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2003) *बौनी होती परछाईं,* मेधा बुक्स, नयी दिल्ली, पृ. 51, 52।
5. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2003) *बौनी होती परछाईं,* मेधा बुक्स, नयी दिल्ली, पृ. 54।
6. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2008) *कुछ भी तो रुमानी नहीं,* अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, पृ. 103।
7. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 26।
8. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 27।
9. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2020) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 37।
10. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 75।
11. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 80।
12. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 128।
13. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010) *कठपुतलियाँ,* भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 129।
14. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2022) *रंग रुप– रस गंध–2,* सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 708।

****